



INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

पतंजलि योग—दर्शन में यम एवं नियम की अवधारणा एवं उनकी प्रासंगिकता

Dr. Sanoo Tiwari
Assistant Professor

Department of Philosophy C.M.P. Degree College University of Allahabad

वर्तमान समय में योग का जो स्वरूप प्रचलित है या जिस रूप में अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाया जाता है, वह योग का वास्तविक स्वरूप नहीं है, क्योंकि जब अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस की बात होती है तो उसमें कुछ आसनों की ही बात होती है जिसका उद्देश्य शारीरिक और मानसिक संतुलन विकसित करना होता है अर्थात् मूलरूप से हमारा शरीर और मन स्वस्थ रहे इसलिए हम योगासन करने के लिए प्रवृत्त होते हैं, किन्तु योग का यह वास्तविक स्वरूप नहीं है। योग का वास्तविक अर्थ हम पतंजलि कृत योग—सूत्र से समझ सकते हैं। योगसूत्र में 4 पाद बताए गए हैं—

- | | |
|--------------|--------------|
| 1. समाधिपाद | 2. साधनपाद |
| 3. विभूतिपाद | 4. कैवल्यपाद |

योगसूत्र के प्रथम पार के द्वितीय सूत्र में उल्लिखित है—

योगश्चित्तवृत्तिः निरोधः

अर्थात् चित्तवृत्तियों के निरोध को योग कहते हैं। योग युज् धातु से बना है। युज् का अर्थ जोड़ना होता है। यहां किससे जुड़ने की बात हो रही है। सांख्य और योग की तत्त्वमीमांसा में उल्लिखित जो जीव है, वह अपने आपको शरीर से तादत्म्य रखने वाले अहंकार के रूप में देखता है, अज्ञान के वशीभूत होकर लेकिन वह उसका वास्तविक स्वरूप नहीं है, उसका वास्तविक स्वरूप पुरुष का है। पुरुष से तात्पर्य है जो सर्वव्यापी विशुद्ध चैतन्य है, उसमें किसी प्रकार का अज्ञान नहीं है, कूटस्थ है, पुरुष का यही वास्तविक स्वरूप है। पुरुष प्रकृति और उससे उद्भूत तत्वों से भिन्न है। सांख्य और योग की तत्त्वमीमांसा दो तत्वों को मानता है—पुरुष और प्रकृति, पुरुष विशुद्ध चैतन्य है लेकिन, उसमें क्रिया नहीं होती, प्रकृति जड़ है। लेकिन क्रियाशील है। आध्यात्मिक अज्ञान को वजह से पुरुष प्रकृति और उससे उद्भूत तत्वों से अपना वादात्म्य महसूस करने लगता है, ये तादात्म्य हो अज्ञान का स्वरूप है, और योग इसी अज्ञान से मुक्त होने की स्थिति है। जब चित्त में किसी प्रकार

का विकास उत्पन्न नहीं होता है, पुरुष का जो वास्तविक स्वरूप है उसका उसे ज्ञान हो जाता है। अगर हम सांख्य और पतंजलि योग-सूत्र देखें तो योग का उद्देश्य भी है अपने स्वरूप का ज्ञान प्राप्त होना। योग-सूत्र के सूत्र-3 में कहा गया है—

तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽनस्थानम् । 1-3

अर्थात् द्रष्टा ज्ञाता है वह अपने स्वरूप में अवस्थित हो जाता है।

योग की स्थिति में जो द्रष्टा है वह अपने पुरुष रूप में अवस्थित हो जाता है, लेकिन सामान्य जीव जो अविद्या ग्रस्त है, वह अपने पुरुष रूप को नहीं जान पाता है। वह शरीर, मन, इन्द्रिय, बुद्धि, चित्त, अहंकार इन सबसे अपना तादात्म्य अनुभव करता है और खुद को मर्त्य परिवर्तनशील, सीमित जीव के रूप में समझता है इसलिए नाना प्रकार के राग-द्वेष से ग्रस्त होता है और दुःखों को भोगता है। यह आध्यात्मिक विपन्नावस्था है, इससे निकलने का मार्ग योग ही हमें प्रदान करता है।

पतंजलि योग दर्शन में बताया गया है कि योग की स्थिति को प्राप्त करने के लिए आठ अंगों का सहारा लेना पड़ता है। इन आठ अंगों का एक क्रम है। योग-सूत्र के द्वितीय पाद के उन्तीसवें सूत्र में उल्लिखित है—

यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहार

धारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि । 2-29

अर्थात् यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि ये आठ अंग बताए गए हैं।

जब तक हम यम का पालन नहीं कर लेते तब तक हम नियम तक नहीं पहुंच सकते। यम को करने के बाद हम नियम के अधिकारी होंगे। यह योग की परम्परा है।

सर्वप्रथम हम यम की चर्चा करेंगे, जिन्हें सार्वभौम बताया गया है। इन्हें सार्वभौम नियम इसलिए बताया गया है क्योंकि देश-काल की सीमा से यह बाधित नहीं होता है तथा सभी के द्वारा इसका पालन होना चाहिए। योग-सूत्र के दूसरे पाद के तीसवें सूत्र में यम के अंगों पर चर्चा की गयी है—

“तत्राहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहायमाः”

अर्थात् की चर्चा करते हुए योग-सूत्र के दूसरे पाद के पैतसिवें सूत्र में कहा गया है—

“अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्यागः।

अर्थात् अहिंसा की सिद्धि हो जाने पर उस व्यक्ति के समीप सभी प्राणी वैर त्याग देते हैं।

मानसिक, वाचिक तथा कर्म के स्तर पर अहिंसा की बात होती है। मानसिक, वाचिक, कर्म के स्तर पर अहिंसा के साधना की बात होती है। अहिंसा का तात्पर्य है मन से भी किसी को कष्ट देने का भाव नहीं होना है। जो व्यक्ति लम्बे समय तक मन, कर्म, वचन से अहिंसा का पालन करता रहता है तो जब अहिंसा की सिद्धि हो जाती है तो उसके सामने हिंसक

प्राणी भी उनकी हिंसक क्षति भी शांत हो जाती है। योग-सूत्र के दूसरे पार के 36वें सूत्र में कहा गया है—

“सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम्” ।

अर्थात् सत्य की सिद्धि हो जाने पर उसके वचन क्रिया में फलित होते हैं।

योग-सूत्र में कहा गया है जब हम मन और कर्म से इन साधनों का पालन करते हैं तो विशेष शक्ति हममें जागृत होती है, किन्तु यह इतना सरल नहीं है जब हम निरंतर अभ्यास करते रहते हैं तब हमें सिद्धि होती है। किन्तु कैसे पहचानने कि हमें सिद्धि प्राप्त हो गयी है तो योग सूत्र में प्रतिष्ठित हो जाता है वह जो कुछ कहता है वह सत्य हो जाता है। जो हर परिस्थिति में मन, कर्म, वचन से सत्य का पालन करता है, एक समय ऐसा आता है, उसे सिद्धि की प्राप्ति हो जाती है तो उसके वचन भी झूठे नहीं हो सकते हैं। योग-सूत्र के दूसरे पार के सैतासिवें सूत्र में कहा गया है—

“अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम्” ।

अर्थात् अस्तेय की प्रतिष्ठा होने पर विविध प्रकार के रत्नों की प्राप्ति होती है।

यहां अस्तेय का तात्पर्य यह है कि जो चीज धर्म पूर्वक, नैतिकतापूर्वक हमारे नहीं है उसे हमें लेने का प्रयास भी नहीं करना चाहिए, यहां तक कि उसे लेने की इच्छा भी नहीं रखनी चाहिए, यह अस्तेय की अवधारणा है। किन्तु वर्तमान समय में हम क्या देख रहे हैं कि जो प्रकृति की चीज है, मानव समाज यह सोच लेकर चल रहा है कि वह सिर्फ हमारे लिए है। पर्यावरण में जीव-जन्तु मनुष्य सभी प्राणी है, तो यहां ऑक्सीजन, मिट्टी, जंगल, वायु किसी भी चीज के बारे में बात हो तो यह सिर्फ मानव समाज के लिए धरती पर है, ऐसा सोचना गलत विचार है। आज मानव समाज अपने स्वार्थ के लिए प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करते जा रहे हैं, योग-दर्शन के अनुसार यह चोरी है। यह अस्तेय का उल्लंघन है। मनुष्य के इस स्वार्थपरता के कारण विषमताएं उत्पन्न हो रही हैं, इससे नैसर्गिक सामंजस्य बिड़ता है, तो उसके दुष्प्रभाव भी होते हैं और वह दुष्प्रभाव किसी के लिए हितकारी नहीं है। उदाहरणास्वरूप—हम पेड़ों को काटते हैं तो इससे ऑक्सीजन का स्तर कम होता है और कार्बनडाई ऑक्साइड का स्तर बढ़ता है। नदी में बिना हम कुछ सोचे समझे कूड़ा-कचरा फैलते हैं वो इससे पानी में रहने वाले जीव-जन्तु मरते हैं, पानी दूषित होता है। ये सब जो परिस्थिति बनती है उसका कारण यह है कि प्रकृति के संसाधनों को हम मानव जाति के स्वार्थजनित उपयोग के लिए उसका दोहन करना शुरू कर देते हैं, जो दूसरे प्राणियों के लिए हानिकारक है जिससे पर्यावरण का संतुलन बिगड़ता है और इसके दुष्प्रभाव में हम खुद भी फंस रहे हैं।

योग-सूत्र के दूसरे पाद के अड़तालिसवें सूत्र में कहा गया है—

“ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां-वीर्यलाभः”

अर्थात् ब्रह्मचर्य की प्रतिष्ठा होने पर ज्ञान, शक्ति, ऊर्जा की प्राप्ति होती है।

योग-सूत्र के दूसरे पाद के उन्तालिसवें सूत्र में कहा गया है—

“अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथंता संबोधः” ।

अर्थात् अपरिग्रह की सिद्धि होने पर पूर्व के जन्मों का ज्ञान होता है।

अपरिग्रह का तात्पर्य है कि हमें अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं के अनुसार ही इकट्ठा करना चाहिए। योग-सूत्र में बताया गया है इसकी सिद्धि एक अलौकिक ज्ञान के आयाम को खोलता है जिसके माध्यम से व्यक्ति को अपने विभिन्न पूर्व जन्म की स्मृति प्राप्त होती है।

नियम का उल्लेख योग-सूत्र के द्वितीय पाद के बत्तीसवें सूत्र में किया गया है—

“शौचसन्तोषतपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः”।

शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्राणिधान के नियम माने गए हैं।

योग-सूत्र के द्वितीय पाद के चालीसवें सूत्र में कहा गया है—

“शौचात्स्वाङ्गजुगुप्सापरैरसंसर्गः”।

अर्थात् शौच की सिद्धि ही जाने पर दूसरे के प्रति जो शारीरिक आकर्षण है वह समाप्त हो जाता है। शौच का तात्पर्य सफाई से है। यहां शारीरिक और मानसिक दोनों सफाई की बात की जा रही है। शारीरिक शुचिता में कमी होने पर हम विभिन्न प्रकार की बीमारियों से ग्रसित हो जाते हैं।

शारीरिक सुचिता के अलावा हमें मानसिक सुचिता का भी ध्यान रखना चाहिए। अगर मानसिक सुचिता में कमी आएगी तो हम कुकर्म हो जाएंगे। मानसिक सुचिता के लिए हमें प्रयास करना चाहिए कि हम ईर्ष्या, द्वेष, लालच, अहंकार, क्रोध जैसे दुर्गुणों से बचकर रहें। निरंतर अभ्यास से इन दुर्गुणों से दूर रहा जा सकता है।

योग-सूत्र के दूसरे पाद के बयालिसवें सूत्र में कहा गया है—

“संतोषदनुत्तमः सुखलाभः”।

अर्थात् संतोष की सिद्धि होने पर परम सुख प्राप्त होता है।

जब तक हमें संतोष की अनुभूति नहीं होगी तब तक हम जरूरत से ज्यादा चीजें इकट्ठी करते रहेंगे जिससे अपरिग्रह का पालन नहीं हो सकेगा। इसके अलावा अगर हम संतोष का पालन नहीं करेंगे तो हमारी मानसिक अवस्था कलुषित होगी और प्रकृति का दोहन भी होगा। इसके अलावा संतोष को अनुभूति न होने पर हमारे मानसिक दुर्गुण भी दूर नहीं होगी।

योग-सूत्र के द्वितीय पाद के तीतलीसवें सूत्र में कहा गया है—

“कायेन्द्रियसिद्धिरशुद्धि क्षयात्तपसः”

अर्थात् तप की सिद्धि हो जाने पर दिव्यता उत्पन्न होती है। एक प्रकार की आध्यात्मिक शक्ति आ जाती है।

अगर हम अपने इन्द्रिय अनुभवों जो सुखकर और दुःखकर दोनों को धारण करने की क्षमता नहीं रखेंगे तो हम दुःख से भागेंगे और सुख की ओर भागेंगे। इससे हमारे जीवन की प्राथमिकताएं बदलती हैं और हम सुख के पीछे इस कदर भागने लगते हैं कि चाहे हमें

उसके लिए कोई भी कीमत क्यों ना देनी पड़े। इस तरह का आचरण तप के विरुद्ध है। हमें इससे बचना चाहिए।

योग-सूत्र के द्वितीय पाद के चौवासीसवें सूत्र में कहा गया है—

“स्वाध्यायादिष्टदेवतासंप्रयोगः”

अर्थात् स्वाध्याय से हम मंत्र से संबंधित ईष्ट देव का साक्षात्कार प्राप्त कर लेते हैं।

स्वाध्याय के अंतर्गत ग्रन्थों का अध्ययन, आत्म विश्लेषण, मंत्र जप आते हैं। स्वाध्याय में हमें ग्रन्थों का अध्ययन करना चाहिए क्योंकि ग्रन्थों के अध्ययन से सुविचार उत्पन्न होते हैं और फिर मनन करने से हम यह समझ पाते हैं कि हमारे आचरण में कहां त्रुटि हो रही है।

योग-सूत्र के द्वितीय पाद के पैतालीसवें सूत्र में कहा गया है—

“समाधिसिद्धिश्चरप्रणिधानात्”।

अर्थात् ईश्वर प्रणिधान से समाधि की प्राप्ति होती है।

ईश्वर प्रणिधान से समाधि की प्राप्ति होती है जो कि योग का लक्ष्य है। ईश्वर प्रणिधान नियम का अंग है जो आपको उच्चतम सोपान तक ले जाने का क्षमता खाता है। योग-सूत्र में ईश्वर प्रणिधान का तात्पर्य ईश्वर की भक्ति से होता समर्पण से होता है। अर्थात् ईश्वर के प्रति भक्ति और समर्पण हो ईश्वर प्रणिधान का मूल है।

यम और नियम को जानने के बाद हम कह सकते हैं कि वर्तमान समय में जितनी भी समस्याएं उत्पन्न हो रही है वह इन यम और नियम का पालन न करने की वजह से हो रही हैं। साधारणतः सार्वभौम नियम के रूप में यम और नियम को देखा जाता है, नैतिक मापदण्ड के रूप में इन्हें प्रस्तुत किया जाता है लेकिन इनमें अपने आपमें उच्चतम आध्यात्मिक सोपान तक ले जाने की क्षमता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची—

1. Prasad Rama, Patanjali's Yoga Sutras, with the commentary of Vyasa and the glass of Vachaspati Misra, Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd. Allahabad, 1998
2. Aranya Harisharananda Swami, Yoga Philosophy of Patanjali Calcuttar University Press, 1981.
3. Dasgupta, Surendranath, a history of Indian Philosophy, Vol.-1, Rupa Publications India Pvt. Ltd, New Delhi, 2018
4. Sharma Chandradhar, a Critical Survey of Indian Philosophy, Motilal Banarasidas Publishers, Delhi, 2013
5. सिन्हा प्रसाद प्रो० हरेन्द्र, भारतीय दर्शन की रूपरेखा, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 2023